International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 08-08-2025, Accepted: 07-09-2025, Published: 22-09-2025
Volume 11, Issue 3, 2025, Page No. 86-89

रामचरितमानस में नारी–स्वरूप: मध्यकालीन समाज का प्रतिबिंब

सोनम कुमारी [1], मंजु शर्मा [2]
[1] हिंदी विभाग, शोधार्थी, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत
[2] प्रोफेसर, हिंदी विभाग, भारती कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत

सारांश
भारतीय समाज में स्त्री की स्थिति सदैव जटिल विमर्श का विषय रही है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक स्त्री को पुरुष के अधीन माना गया और उसके स्वतंत्र अस्तित्व को प्रायः नकारा गया। आधुनिक समय में जब स्त्री–विमर्श एक सशक्त विमर्शधारा के रूप में उभरा है, तब साहित्य के क्षेत्र में भी स्त्रियों की स्थिति और उनकी अस्मिता पर गहन विमर्श होने लगा है। 'रामचरितमानस' के रचयिता तुलसीदास की नारी–दृष्टि भी इस विमर्श से अछूती नहीं है। तुलसी की दृष्टि एक ओर परंपरापोषित एवं पितृसत्तात्मक समाज की मान्यताओं को प्रतिबिंबित करती है, तो दूसरी ओर उसमें स्त्री की गरिमा और सम्मान के संकेत भी दिखाई देते हैं। अतः तुलसी की नारी–दृष्टि को समझना न केवल तुलसी साहित्य के अध्ययन हेतु, बल्कि मध्यकालीन भारतीय समाज के स्त्री–स्वरूप को जानने के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

मूल शब्दः नारी–दृष्टि, स्त्री–विमर्श, तुलसीदास, रामचरितमानस, पतिव्रत धर्म, पितृसत्ता, स्त्री–अस्मिता प्रगतिशीलता, मध्यकालीन समाज, भक्ति साहित्य।

शोध आलेख

आज का समय विभिन्न विमर्शों का है। ऐसे में यदि तुलसीदास की नारी–दृष्टि पर विचार किया जाए तो कई महत्वपूर्ण पहलू सामने आते हैं। लेकिन इस पर चर्चा करने से पहले यह समझना आवश्यक है कि स्त्री–विमर्श क्या है। दरअसल, स्त्री–विमर्श का अर्थ है स्त्रियों की अस्मिता, उनके अधिकारों और उनसे जुड़ी समस्याओं पर बात करना। इसका मूल उद्देश्य स्त्रियों को उनका 'स्वत्व' और मानवीय अधिकार दिलाना है। परंपरागत रूप से देखा जाए तो स्त्री के अधिकारों और उसके श्रम पर पुरुषों का ही नियंत्रण रहा है। क्योंकि सत्ता हमेशा से पुरुषों के हाथ में केंद्रित रही है, इसलिए स्त्री की दशा–दिशा, उसकी भावनाएँ और आकांक्षाएँ भी पुरुषों द्वारा ही परिभाषित की गईं। परिणामस्वरूप इतिहास में स्त्री का स्वतंत्र अस्तित्व प्रायः दबा रहा। यदि कभी उसका उल्लेख हुआ भी, तो केवल बेटी, पत्नी या माँ की भूमिका तक सीमित रहा।

खैर! तुलसी के नारी–विषयक दृष्टिकोण को बनने के दो कारण नज़र आते हैं। पहला– परंपरापोषित दृष्टिकोण अर्थात् परंपरा से चली आ रही स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण। दूसरा– तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक परिस्थितियां। यह दोनों कारण ही तुलसी की निर्मिति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

मध्यकाल के सारे संत व भक्त कवियों ने स्त्री के दो रूपों में विभाजित कर उसका चित्रांकन किया है। यह दो रूप है– पतिव्रत रूप और कामिनी रूप। कबीर से लेकर तुलसी तक ने स्त्री की कामिनी रूप की घोर निंदा की है और पतिव्रत्य की प्रशंसा ऊँचे स्वरों में की है। ऐसी स्त्रियां जो अपने पति के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव रखती है और पति की सेवा को ही अपना परम धर्म के रूप में स्वीकार करती है, स्वयं कष्ट सहकर पति को हर कष्ट से मुक्त करवाती है, उन्हें ही कबीर और तुलसीदास जैसे भक्त कवियों ने नारी का दर्जा दिया है।

चूंकि, तुलसीदास मर्यादावादी थे और उनका मानना था कि समाज के संचालन में नारी के लिए पतिव्रत ही प्रमुख हैं। इसलिए, उन्होंने पतिव्रत स्त्रियों पर अधिक बल दिया।

'रामचरितमानस' के बालकांड, अरण्यकांड, किष्किंधाकांड, लंकाकांड और अयोध्याकांड सभी स्थानों पर तुलसीदास ने अपने पात्र के माध्यम से नारी के प्रति अपना दृष्टिकोण व्यक्त किया है। अरण्यकांड में ऋषि पत्नी अनुसूया सीता को नारी धर्म के बारे में समझाती है। वे कहती हैं– हे जानकी! माता–पिता, भाई सभी हित करने वाले हैं। हे जानकी! पति तो असीम सुख देने वाला है। वह स्त्री अधम है, जो पति की सेवा नहीं करती।

"माता पिता भ्राता हितकारी। मितप्रद सब सुनु राजकुमारी।
अमित दानि भ्राता वैदेही। अधम सो नारी जो सेव ना तेही।।" [1]

बूढ़ा, रोगी, मूर्ख, धनहीन, अंधा, बहरा, क्रोधी अत्यंत दीन पति का अपमान करने से स्त्री यमपुर में भांति–भांति के दुख पाती है। शरीर, वचन और मन से पति के चरणों में प्रेम करना, स्त्री के लिए, बस एक ही धर्म है, एक ही व्रत है, एक ही नियम हैं–

"धीरज धर्म मित्र अरू नारी! आपद काल परिखिअहिं चारी।
वृद्ध, रोगबस जड़ धनहीना। अंध बधिर क्रोधी अति दीना।।" [2]
"ऐसेहू पति कर किए अपमाना! नारी पाव यमपुर दुख नाना।
एकइ धर्म एक व्रत नेमा! काय बचन मन पति पद प्रेमा।।" [3]

और जो इस पतिव्रत का पालन नहीं करती, अपने पति के प्रतिकूल चलती है, वह जहाँ भी जाकर जन्म लेती है, वही जवानी पाकर विधवा हो जाती है, नर्क को वास करती है।

"पति प्रतिकूल जनम जहाँ जाइ। विधवा होई पाई तरूणाई।" [4]

आधुनिक संदर्भ में अगर तुलसीदास की पात्र अनुसूया की इस पंक्ति पर ध्यान दें तो आधुनिक स्त्रियां इस पुरुषवादी सोच का खंडन करती नजर आती है। यदि कोई यह प्रश्न करता है कि अनुसूया स्त्री होकर इस प्रकार के संवादों को कहती है, जिसका अर्थ है कि वह पुरुषसत्ता के हाथों का खिलौना है और अपनी नियति तथा पुरुषवादी विचारों को स्वीकार कर चुकी। तुलसीदास अनुसूया जैसे पात्रों के माध्यम से नारी के प्रति अपना दृष्टिकोण व्यक्त कर रहे हैं, जो परम्परापोषित जान पड़ता है।

बालकाण्ड में तुलसी शिव–सती प्रसंग में स्वयं, भवानी के मुख से कहलवाते हैं कि 'सती ने अपने जी से अनुमान लगाया कि शिव

ने सब जान लिया है। मैंने शिव से कपट किया है। स्त्रियां स्वभाव से ही मूर्ख और नासमझ होती है। मसलन–

"सती हृदयर अनुमान किय सबु जानेउ सबर्ग्य।
किन्हीं कपदु मैं संभु सन नारि सहज जड़ अगण्य।।" [5]

अर्थात् तुलसी ने स्त्रियों का साधारणीकरण करके एक स्त्री के मुख से उन्हें मूर्ख और नासमझ कहलवाया है। भवानी इस अपराध (भवानी द्वारा सीता रूप धारण कर राम के पीछे–पीछे चलना) से शिव भवानी की ओर से एकदम विमुख हो गए और उन्हें सत्तासी हजार वर्ष तक दारूण दुख सहना पड़ा। भवानी जब पिता के घर आश्रय लेने जाती है तो वहां उन्हें अपमानित होना पड़ता है। इससे रूष्ट होकर सती स्वयं को अग्नि में समर्पित कर देती है।
शिव–पार्वती विवाह के दौरान पार्वती की माता मैना पर्वती को विदा करते समय शंकर से सप्रेम कहती है कि–

"नाथ उमा मम प्राण सम गृहकिंकरि करेंहु।
छमहु सकल अपराध अब होई प्रसन्न वरू देहु।।" [6]

अर्थात् हे नाथ! यह उमा मुझे मेरे प्राणों से प्रिय है। आप इसे अपने घर की टहलनी बनाइएगा और इसके सब अपराधों को क्षमा करते रहिएगा। यह मुझे वर दीजिए। ठीक इसी प्रकार, सीता की माँ सुनैना सीता को रामचंद्र को सौंपते हुए कहती है कि– इसके सुशील स्वभाव और स्नेह को देखकर इसको अपनी दासी मानना। यथा–

"तुलसी सीलु सनेहु लखि निज किंकरी करि मानिबी।" [7]

आगे, मैना पार्वती को पतिव्रत धर्म का उपदेश देते हुए कहती है– हे पार्वती! तू सदा शिव जी के चरण की पूजा करना। नारियों का यही धर्म है। उनके लिए पति ही देवता है और कोई देवता नहीं।

"करेहु सदा संकर पद पूजा। नारि धर्म पति देउ ना दूजा।।" [8]

ठीक इसी प्रकार का उपदेश जनक जी ने अपनी पुत्रियों को दिया है–

"बहुविधि भूप सुता समझाई। नारिधरमु कुलरीति सिखाई।।
दासी दास दिए बहुतेरे। सूचि सेवक जे प्रिय सिय करै।।" [9]

मैना तथा जनक जी के विचार पितृसत्तात्मक समाज की सोच को दर्शाता है, जहाँ स्वयं जनक जी और मैना इसमें जकड़ी हुई है। जहाँ तुलसीदास को सीता व पार्वती को राम व शंकर की सहयोगिनी, सहधर्मिणी तथा हमसफर बनाना चाहिए था, वहाँ वे उन्हें पुरुषों की दासी बनाते हैं। यह तुलसीदास के परंपरपोषित सोच को दर्शाता है। तुलसी आज इसलिए भी प्रासंगिक नजर आते हैं क्योंकि यह सोच आज भी हमारे समाज में ज्यों का त्यों बरकरार है। आज भी हमारे समाज में स्त्रियों का कोई अस्तित्व नहीं है, उन्हें किसी की पत्नी, पुत्री व माता ही माना जाना है। इनसब से अलग इनका कोई अस्तित्व नहीं होता है। हालाँकि, तुलसी ने स्त्रियों के साथ–साथ पुरुषों से भी पत्नीधर्म का पालन करवाया है, लेकिन बहुत कम जगहों पर।

"जननी सम जानहि पर नारी।
तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारे।।" [10]

अर्थात् जो पुरुष अपनी पत्नी के अलावा, किसी और स्त्री को अपने माँ समान समझता है। उसी के हृदय में भगवान का निवास होता है, जो पुरुष दूसरी औरतों के साथ संबंध बनाते हैं, वह पापी होते हैं, उनसे ईश्वर हमेशा दूर रहता है।
हालांकि, ऐसा नहीं था कि तुलसी स्त्रियों की पराधीनता तथा पीड़ा को नहीं समझते थे। वह नारी की दयनीय स्थिति को देखकर दुखी मालूम पड़ते हैं। उनके हृदय में भी स्त्रियों के समाजगत पराधीनता के कारण करूणा की भावना जाग उठती है, तभी तो तुलसी कहते हैं–

"कत बिधि सृजीं जग माही, पराधीन सपनेहुँ सुख नाहि।।" [11]

इसी तरह, सीता स्वयंवर के उपरांत सीता की माता बार–बार अपनी पुत्री से मिलकर कहने लगी–हाय! ब्रह्मा ने स्त्री क्यों बनाई।

"बहुरि बहुरि भेटहि महतारी, कहहीं बिरंचि रची कत नारी।" [12]

कोई भी रचनाकार अपने विचारों को संप्रेषित करने के लिए काव्य में दो प्रकार के पात्र रखते हैं– सुपात्र और कुपात्र। रचनाकार की संवेदना। प्रतिबद्धता सुपात्र से रहती है। 'रामचरितमानस' में केकैयी, मंथरा, शुपनखा, रावण आदि कुपात्र के रूप में आते हैं तो राम, लक्ष्मण, सीता, मुनि, कागभुसुंडि आदि सुपात्र के रूप में। तुलसी ने इन दोनों पात्रों से ही नारियों के विषय में कुछ न कुछ कहलवाया है जोकि तुलसी की परंपरा से प्राप्त दृष्टिकोण तथा युगबोध का ही फल है। स्त्रियों के संबंध में अनेक धारणाएँ तुलसी के काव्य में देखने को मिल जाता है। एक स्थान पर तुलसी अपने पात्र केकैयी के द्वारा मंथरा के बारे में कहते हैं–

''काने, खोरे, कुबरे, कुटिल, कुचाली जानि,
तिय विसेषि पुनि चेरि कहि भरत मातु मुस्कानि।।'' [13]

अर्थात् काना, लंगड़ा और कुबड़ा को कुटिल और कुछ कुचाली जाना चाहिए, उनमें भी स्त्री और खास कर दासी। इतना कह कर भरतजी की माता केकैयी मुस्कुरा देती है और कुछ ही देर में केकैयी मंथरा के वशीभूत हो जाती है। केकैयी के द्वारा कहे गये यह वाक्य, उस समय के समाज को दर्शाता है, जिनमें स्त्री के साथ–साथ काना, लंगड़ा आदि की स्थिति ठीक नहीं थी। तुलसी कहते हैं–

"गूढ़ कपट प्रिय बचन सुनि तीय अधर बुद्धि रानी,
सुरमाया बस बैरिनिहि सुहृदय जानि पतिआनि।।" [14]

अर्थात् स्त्रियों की बुद्धि होठों में होती है, क्योंकि बातों में आकर चलविचल हो जाया करती है। उसके बाद रानी केकैयी ने गुप्त कपटभरे, प्यारे वचनों को सुनकर देवताओं की माया के बस में होकर बैरिन मंथरा को अपना हित जानकर उसपर विश्वास कर लिया। यहाँ तुलसीदास के स्त्रियों के प्रति विचार से बिल्कुल भी सहमत नहीं हुआ जा सकता है, क्योंकि बातों में आकर तो समय–समय पर सभी चलविचल हो जाया करते हैं, इसमें क्या स्त्री और क्या पुरुष? राजा दशरथ तथा राम के प्रति केकैयी के दुर्व्यवहार से दुखी होकर, अयोध्या निवासी एक केकैयी की ही नहीं समस्त नारी जाति की निंदा करती हैं–

"सत्यं कहहि कबि नारि सुभाउ। सब बिधि अगहु अगाह दुराआ।
निज प्रतिबिम्बु बरूकी गाहि जाई। जानि न जाइ नारि गति माई।।" [15]

इससे ऐसा जान पड़ता है कि उस समय के समाज में स्त्रियों के प्रति दृष्टिकोण ठीक नहीं थे। कोई भी कवि/रचनाकार अपने समाज की उपज होता है। तुलसी भी अपने समाज की उपज थे। तुलसी के समाज में स्त्रियों को लेकर अच्छी दृष्टिकोण नहीं थी। तुलसी ने स्त्री के प्रति दृष्टिकोण अपने परम्परा से प्राप्त किया था। रावण–मंदोदरी प्रसंग में रावण कहता है कि–

"नारी सुभाउ सत्य सब कहही, अवगुन आठ सदा उर रहहि।" [16]

"साहस अनृत चपलता माया। भय, अविवेक असौच अदाया।
रिपु कर रूप सकल तै गावा। अति विसाल भय मोहि सुनावा।।" [17]

अर्थात् स्त्री का स्वभाव सब सत्य ही कहते हैं कि उसके हृदय में आठ अवगुण सदा रहते हैं– साहस, झूठ, चंचलता, माया, भय, अवगुण, अविवेक, अपवित्रता और निर्दयता। तुलसी कुपात्र के साथ–साथ सुपात्र के द्वारा भी स्त्रियों के प्रति निंदा व्यक्त की है। भरत अपने मामा के यहाँ से लौट आए हैं। उन्हें पता लग गया है कि उनकी माता राम के वनवास और पिता के स्वर्गवास का कारण बनी हुई है। अपनी माता की करनी को संपूर्ण नारी जाति पर घटा कर भरत कहते हैं –

"बिधिहु न नारि हृदय गति जानी,
सकल कपट अध अवगुण खानी।।" [18]

इस छंदांश के हवाले से तुलसी कहना चाहते हैं कि नारी के हृदय की गति को विधाता भी नहीं जान सकता है। नारी का हृदय सभी तरह से कपट, पाप और अवगुणों की खान होता है। तुलसीदास के पात्र नारी हृदय को समस्त गुणों की खान मानते हैं तो पुरुष हृदय किस की खान है? क्या उसमें छल कपट नहीं हो सकता? अगर नहीं, तो ऐसा क्यों?
शुपनखा के. प्रसंग में तुलसीदास के पात्र कागभुसुंडि कहते हैं कि–

"भ्राता पिता पुत्र उरगारी पुरुष मनोहर निरखत नारी।
होई विकल सक मांहि न् रोकी, जिमि रबिमनि द्रव रवि बिलोकि।।" [19]

अर्थात् हे गुरूढ़! नारी मनोहर पुरुष को देखते ही, वह चाहे भाई हो, पिता हो या पुत्र ही क्यों ना हो विकल हो जाती है और अपने मन को रोक नहीं सकती। जैसे सूर्य को देखकर सूर्यकांत मनी पिघल जाती है वैसे ही सुंदर पुरुष को देखकर नारी पिघल जाती है। यहाँ तुलसीदास ने अपने मन की बात कागभुसुंडि के माध्यम से कहलवाया है, परंतु ऐसा प्रतीत होता है कि तुलसी का यह दृष्टिकोण एकतरफा है, क्योंकि आकर्षण तो सहज व नैसर्गिक होता है। वह किसी को देखकर, किसी को भी हो सकता है, चाहे स्त्री हो या पुरुष। इसमें केवल यह कहना कि स्त्री ही सुंदर पुरुष को देखकर पिघल जाती है– गलत होगा।
एक स्थान पर रामचंद्र भ्राता लक्ष्मण को संबोधित करते हुए कहते हैं कि– हे लक्ष्मण! जो लोग कामदेव की सेना को देखकर धीरज रखें, वही संसार में मान्य होंगे– इस कामदेव का एक परम बल है– नारी। जो इससे उबर जाए वहीं भारी योद्धा है। यथा–

"लक्ष्मण देखत काम अनीका
रहही धीर तिन्ह कै जग लिका।
एहि के एक परंबल नारि,
तेहि ते उबर सुभट सोई भारी।।" [20]

क्या तुलसी के नजर में स्त्री कामदेव का परम भक्त छोड़कर और कुछ नहीं है? तुलसी की इस दृष्टि को हम कबीर में भी देखते हैं। कबीर ने भी स्त्री को माया, महाठगनी आदि कहा है। कबीर भी कहते हैं–

"नारी के छाई पर, अंधा होत भुजंग।
कबीरा तिनकी कौन गति जो नित नारी के संग।।" – कबीर

भक्त कवियों का स्त्री के प्रति मध्यकालीन दृष्टिकोण था। तुलसी भी उससे उभर नहीं पाए है। अगर अहिल्या का प्रसंग देखें तो तुलसी यहाँ प्रगतिशील, प्रासंगिक नजर आते हैं। एक पुरुष (इंद्र) के पापों का फल–स्त्री (अहिल्या) को बरसों से भोगना पड़ रहा था। उसे पति व समाज द्वारा बहिष्कृत कर दिया गया था। तुलसी यहाँ राम से अहिल्या का उद्धार करवाकर, समाज में उसे पुनः स्थापित करवाते हैं। यहाँ राम सत्ता के प्रतिनिधि हैं और राम (सत्ता) के द्वारा अहिल्या का उद्धार करवाना, उसे समाज में स्वीकृति दिलवाना, तुलसी के स्त्री के प्रति दृष्टिकोण का ही एक पक्ष है जहाँ तुलसी परंपरा से हटकर नजर आते हैं।

"परसत पद पावन सोक नसावन,
प्रगट गई तप पुंज सही।
देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही।।
अति प्रेम अधीरा पुलक शरीरा, मुख नहि आवइ बचन कही।
अतिसय बड़भागी चरनन लागी, जुगल नयन जलधार बही।" [21]

मध्यकाल में जहाँ स्त्रियाँ सामाजिक बन्धनों में जकड़ी हुए थी, वहाँ तुलसी के द्वारा सत्ता में हस्तक्षेप करवाकर अपनी प्रगतिशीलता दिखाते हैं। दशरथ केकैयी से राजकीय कार्य में सलाह ना लेने के कारण माफी माँगते हैं–

"मैं सबु कीन्ह तोहि बिनु पूछें। तेहि ते परेउ मनोरथ छूछे।।" [22]

तुलसी के समय में पुरुष अनेक विवाह कर सकते थे, उसके ऊपर कोई सामाजिक बंधन नहीं था। पुरुष के समक्ष स्त्री का कोई मूल्य नहीं था, वह केवल भोग–विलास की वस्तु मानी जाती है।
ऐसे में तुलसीदास रामराज्य में एक पत्नीव्रत का आदर्श स्थापित करते हैं। जहाँ राजा दशरथ तीन विवाह करते हैं, वहीं श्रीराम एक ही विवाह करते हैं। अगर वह चाहते तो कई विवाह कर सकते थे तथा सीता के निर्वासन के बाद अन्य स्त्री के साथ संबंध स्थापित कर सकते थे, लेकिन वह ऐसा नहीं करते है। तुलसी की प्रगतिशीलता और स्त्रियों के प्रति सम्मान यहाँ नज़र आता हैं। वर्तमान समय में भी संविधान होने के बावजूद पुरुष एक पत्नी के रहते हुए भी अन्य स्त्री से संबंध बनाता है। यहाँ तुलसी आधुनिक पुरुष से आगे निकल कर स्त्री का सम्मान करते हैं। यही कारण है कि आज भी तुलसी और उनका साहित्य 'रामचरितमानस' प्रासंगिक और पठन योग्य है। उदाहरण देख सकते हैं–

"एकनारिव्रत रत सब झारी।
ते मन बच क्रम पति हितकारी।।" [23]

तुलसी की प्रगतिशीलता यहाँ भी नजर आती है, जब वे सीता–राम के प्रेम–विवाह की स्वीकृति को आदर्श रूप में प्रस्तुत करते हैं। वर्तमान समय में भी पितृसत्तात्मक समाज में स्त्रियाँ अपने मन–पसंद वर नहीं चुन सकती है। पिता–या भाई द्वारा चुने गए वर से ही वह विवाह कर सकती है। अगर वह ऐसा नहीं करती है तो उसे मार दिया जाता है अथवा समाज व

परिवार से बहिष्कृत कर दिया जाता है। ऐसे में तुलसी मध्यकाल में प्रेम–विवाह के आदर्श को समाज के सामने रखते हैं। ये तुलसी की प्रगतिशीलता नहीं है तो और क्या है! प्रसंग है पुष्पवाटिका का। राम सीता के रूप पर मुग्ध हो गए हैं। वे बातें तो लक्ष्मण से करते हैं पर उनका ध्यान सीता के रूप में लगा हैं–

"करत बतकही अनुज सन, मन सिय रूप लोभान।
मुख सरोज मकरंद छवि, करई मधुप रस पान।।" [24]

तुलसीदास ने नारी के लिए भक्ति को भी सुलभ बताया है–

"राम भगति रत नर अरू नारी,
सकल परम गति के अधिकारी।" [25]

तुलसी का नारी के प्रति दृष्टिकोण अपने परंपराबोध तथा युगबोध से कहीं बढ़ कर था। मध्यकाल में जहाँ स्त्रियाँ मान, मर्यादा, त्याग, ममता की मूर्ति के अलावा कुछ नहीं थी, वहीं तुलसी स्त्रियों को स्वतंत्र, तथा सम्मान की दृष्टि से देखते थे।
तुलसी आज के नारी विमर्शकारों के मानदंडों पर जितने नारी निंदक या मध्यकालीन मानसिकता के पोषक लगते हैं, उससे कहीं अधिक ये अपने काल विशेष में स्त्री विमर्श की दृष्टि से आधुनिक या प्रगतिशील ठहरते हैं। जो विद्वान मध्यकाल की समाजिक अराजकता और उसमें स्त्रियों की दुर्दशा को भलीभाँति जानते है साथ ही इस तथ्य से सहमत हैं कि साहित्यकार व्यापक मानवसमूह के हितों को लेकर अपनी लेखनी चलाता है, तो स्त्री–विमर्श की दृष्टि से तुलसी पर जो आरोप लगाये जाते हैं, वे निराधार सिद्ध होंगे।

निष्कर्ष

तुलसीदास की नारी–दृष्टि को केवल एकांगी रूप में देखना उचित नहीं होगा। यद्यपि उनके काव्य में परंपरागत पुरुषवादी सोच तथा स्त्री के पतिव्रत रूप का महिमामंडन मिलता है, परंतु इसके साथ ही स्त्री की पीड़ा, पराधीनता और उसकी गरिमा को लेकर करुणा और सम्मान भी प्रकट होता है। 'रामचरितमानस' में सीता, पार्वती, अनुसूया जैसी स्त्रियों के माध्यम से जहाँ स्त्री को पतिव्रत धर्म की परिधि में बाँधने का प्रयास है, वहीं अहिल्या–उद्धार, राम का एकपत्नीव्रत और सीता–राम के प्रेम–विवाह जैसे प्रसंग तुलसी की प्रगतिशीलता और स्त्री के प्रति आदरभाव को भी उद्घाटित करते हैं। इस प्रकार तुलसी का साहित्य केवल नारी–निंदा या स्त्री–वंदना का ग्रंथ न होकर, मध्यकालीन समाज के स्त्री–संबंधी यथार्थ का दस्तावेज़ है, जिसमें स्त्री की स्थिति, उसकी मर्यादा और उसकी स्वतंत्रताकृ सभी के विविध आयाम प्रतिबिंबित होते हैं। आधुनिक स्त्री–विमर्श की कसौटी पर तुलसी कभी–कभी पिछड़े प्रतीत होते हैं, तो कभी अपने युग से आगे बढ़े हुए। यही विरोधाभास तुलसी की नारी–दृष्टि को आज भी प्रासंगिक और विचारणीय बनाता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. रामचरितमानस, तुलसीदास, अरण्यकांड, दोहा–4, चौपाई–3
2. रामचरितमानस, तुलसीदास, अरण्यकांड, दोहा–4, चौपाई–4
3. रामचरितमानस, तुलसीदास, अरण्यकांड, दोहा–4, चौपाई–5
4. रामचरितमानस, तुलसीदास, अरण्यकांड, दोहा–4, चौपाई–40
5. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–57(क)
6. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–101
7. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–336, छंद–335
8. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–101, चौ–3
9. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–339, चौ–1
10. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–339, चौ–1
11. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–101, चौ–3
12. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–339, चौ–4
13. रामचरितमानस, तुलसीदास, अरण्यकांड, दोहा–14
14. रामचरितमानस, तुलसीदास, अरण्यकांड, दोहा–16
15. रामचरितमानस, तुलसीदास, अयोध्याकांड, दोहा–47 से पहले
16. रामचरितमानस, तुलसीदास, लंकाकांडा, दोहा–15, चौ.1
17. रामचरितमानस, तुलसीदास, लंकाकांडा, दोहा–15, चौ.2
18. रामचरितमानस, तुलसीदास, अयोध्याकांड, दोहा–161, चौ.2
19. रामचरितमानस, तुलसीदास, अयोध्याकांड, दोहा–61, चौ.3
20. रामचरितमानस, तुलसीदास, अयोध्याकांड, दोहा–61, चौ.5
21. कबीर ग्रंथावली, श्यामसुंदर दास, दोहा–14
22. रामचरितमानस, तुलसीदास, अयोध्याकांड, दोहा–31, चौ.3
23. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–114, चौ.3
24. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–158, चौ.4
25. रामचरितमानस, तुलसीदास, बालकाण्ड, दोहा–159, चौ.5

सहायक ग्रंथ–

1. मध्यकालीन साहित्य को पढ़ने की एक दृष्टि: नित्यानंद तिवारी
2. भक्ति आंदोलन और तुलसीदास: रामविलास शर्मा
3. तुलसी का समाज और ज्ञानः अजय तिवारी
4. स्त्री के हक़ में कबीर: प्रो. अनिल राय
5. तुलसी–साहित्य के आपेक्षिक मूल्य–मोहन राकेश